‘रिस्क’ केवल नागरिक ही ले सकते हैं, सरकारें नहीं !

आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि लॉक डाउन खोलने को लेकर नागरिकों के मन में जैसी चिंताएँ हैं वैसी उन लोगों के मनों में बिलकुल नहीं हैं जो दुनिया भर में सरकारों में बैठे हुए हैं।उनकी चिंताएँ एकदम अलग हैं।नागरिक आमतौर पर मान बैठता है कि सरकार इस तरह की परिस्थितियों में ‘केवल’ उसी की चिंता में लगी रहती है।ऐसा वास्तव में होता नहीं है और इसे सभी जानते भी हैं।मसलन, एक नागरिक की यह दुविधा हो सकती है कि लॉक डाउन अगर पूरी तरह से खोल दिया जाए तो उसे ‘खुली जेल’ से मुक्त होते ही सबसे पहले क्या करना चाहिए इसका उसे पता नहीं है।हो सकता है कि वह कहीं जाए ही नहीं और महामारी के डर से स्वेच्छा से ही अपने आपको घरों में बंद कर ले।पर सरकारों को पता रहता है कि नागरिक कहाँ-कहाँ जा सकता है और उससे राज्य को क्या नुक़सान हो सकता है।नागरिक अपने शरीर और परिवार के भविष्य को लेकर जितना चिंतित रहता है उससे ज़्यादा चिंता राजनेताओं को अपने राजनीतिक भविष्य को लेकर रहती है।लॉक डाउन जैसे महत्वपूर्ण मसलों पर लिए जाने वाले फ़ैसलों का सम्बंध भी इन्हीं चिंताओं से रहता है।

ब्रिटेन में प्रधानमंत्री बोरिस जॉन्सन को कोरोना के कारण जब सरकारी अस्पताल में भर्ती होना पड़ा तो योरप की राजनीति में जैसे भूचाल आ गया।एक प्रधानमंत्री की जान का संकट देश का संकट बन गया।उसकी बीमारी ब्रिटेन में ही हज़ारों की संख्या में हो रही नागरिक-मौतों से अलग हो गई।तरह-तरह की अटकलें लगाई जाने लगीं।अमेरिका में राष्ट्रपति ट्रम्प की प्रतिदिन कोरोना जाँच हो रही है।वहाँ एक बड़ी संख्या में लोग और कई राज्यों के प्रमुख(गवर्नर) लॉक डाउन प्रतिबंधों को जारी रखने के पक्ष में हैं पर राष्ट्रपति सब कुछ जल्दी से खोलकर अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाना चाहते हैं जिससे कि नवम्बर में होने वाले चुनावों के पहले उनकी लोकप्रियता शिखर पर पहुँच सके।अमेरिका में कोरोना के कारण हो रही हज़ारों मौतों के बारे में सबको पता है।

राजनेताओं और उनके ही नागरिकों के सोच के बीच किस तरह का फ़र्क़ होता है उसका सामान्य तौर पर आकलन नहीं हो पाता।जैसे कि मौजूदा संकट में भी विश्व के अधिकांश नेता जनता के बीच अपनी छवि और लोकप्रियता को लेकर भी उतने ही चिंतित माने जा सकते हैं जितने कि मरनेवालों के आँकड़ों को लेकर।’इकॉनमिस्ट’ पत्रिका का आकलन है कि इस संकट की घड़ी में विश्व के कम से कम दस राष्ट्राध्यक्षों की लोकप्रियता में नौ प्रतिशत जितना इज़ाफ़ा हुआ है।भारत सहित ऑस्ट्रेलिया ,कनाडा, जर्मनी में तो इसे व्यापक तौर पर महसूस किया गया है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी भी अपने सम्बोधनों में

उल्लेख करना नहीं भूलते हैं कि कोरोना से निपटने में भारत के प्रयासों की दुनिया भर में तारीफ़ हुई है।

वैश्विक आपदाओं का इसे एक दुर्भाग्यपूर्ण समापन भी माना जा सकता है कि नागरिकों की मौतें केवल एक संख्या बनकर तुलनात्मक अध्ययनों के लिए रेकार्ड में दफ़्न हो जाती हैं और महत्वपूर्ण यह बन जाता है कि कितने लोग अपनी सत्ताएँ क़ायम रखने में सफल हो गए।हम अपने यहाँ के ही संदर्भ में ही देखें तो कोरोना से निपटने के मामले में केरल के बाद सफल राज्यों में गिनती गोवा, सिक्किम, मणिपुर, अरुणाचल, मिज़ोरम आदि की हो रही है।केरल तो ताइवान के साथ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा में है।अत: माना जा सकता है कि मौतों के आँकड़ों के संदर्भ में कोरोना से निपटने को लेकर जो चिंता भारत की प्रतिष्ठा को लेकर प्रधानमंत्री की हो सकती वही राज्यों के मुख्यमंत्रियों की भी राष्ट्रीय स्तर पर हो सकती है।इसीलिए जो उलझन नागरिकों के मन में 'कहाँ जाएँ' को लेकर है वह राज्य सरकारों के मन में नहीं है।उनकी चिंता 'कब और कहाँ तक 'जाने दिया जाए को लेकर है और वह उलझन लम्बे अरसे तक भी बनी रह सकती है।अत: जो नागरिक इस समय दुविधा में हैं वे निश्चिंत हो सकते हैं कि तत्काल कुछ नहीं खुल रहा है और उन्हें कहीं नहीं जाना है।जो पैदल चल पड़े हैं, केवल उन्हें ही पता है कि कहाँ पहुँचना है।और उसके बारे में किसी भी बैठक में कभी कोई बात नहीं होगी।'रिस्क' केवल नागरिक ही ले सकते हैं, सरकारें नहीं।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)